© 2016 IJSRST | Volume 2 | Issue 4 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

प्रवासी हिन्दी साहित्य की अवधारणा और उसका वैश्विक परिदृश्य

डॉ॰ प्रवीन कुमार यादव
असि॰ प्रोफे॰, हिन्दी,
राजकीय पी॰जी॰ कॉलेज आलापुर,
अम्बेडकरनगर, उ॰प्र॰, भारत पिन- 224147

प्रवास का अर्थ हैं- विदेश गमन, अन्य देश में वास करना। प्रवासी का अर्थ हुआ- अपनी मातृभूमि छोड़कर अन्य राष्ट्र में रहने वाला। व्यक्ति कहीं चला जाय, लेकिन जहॉ उसका बचपन बीता होता हैं, जहॉ उसकी जड़े होती हैं, वहॉ की स्मृतियॉ कभी खत्म नही होती। अपने मूल निवास/देश से विछिन्न होकर पर राष्ट्र में बसने वाला यह प्रवासी व्यक्ति जब साहित्य सृजन के लिए कलम उठाता है तब प्रवासी साहित्य का जन्म होता है। प्रवासी लेखन के लिए अंग्रेजी भाषा में DIASPORA शब्द प्रचलित है, जिसका अर्थ है- विकीर्णन, अलगाव या निर्वासन। विकीपीडिया में इसे इस प्रकार परिभाषित किया गया है -"A disapora is a scattered population whose origin lies in a seprate geographic locale. In particular, diaspora has come to refer to involuntary mass dispersions of a population from its indigenous territories……."[1]

इस प्रकार प्रवासी तथा अप्रवासी लेखन मे रोजी-रोटी के लिए मजबूरी में या सुनहरे भविष्य के लिए स्वेच्छा से पर राष्ट्र मे प्रवास के चलते अपनी मातृभूमि से विछिन्न होने का दर्द मुख्य रूप से प्रतिबिम्बित होता है। इस सन्दर्भ में विलियम सैफरॉन ने प्रवासी व अप्रवासी के बीच अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है- " There included criteria that the group maintains a myth or collective memory of their homeland, they regards their ancestral homeland as their true home, to which they will eventually return being committed to the restoration or maintance of that homeland and they relate" personally or vicarisously to the homeland to a point where it shapes their identity" [2]

IJSRST1624107 | Received: 01 July 2016 | Accepted: 20 July 2016 | July-August-2016 [(2)4: 346-350]

प्रवासी हिन्दी लेखन का भी बीज मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड आदि देशों में तब अंकुरित हुआ जब भारतीय मूल के गिरमिटिया मजदूर बडी संख्या में उक्त देशों ने भारत से ले जाये गये। सन् 1834 ई० में दास प्रथा की समाप्ति के बाद अंग्रेजो और फ्रांसीसियों द्वारा अपने- अपने उपनिवेशों में चाय, कपास, गन्ना, आदि के खेतो तथा कल करखानो में काम करने के लिए सस्ते मजदूर के रूप में पानी के जहाज द्वारा बडी संख्या भारतीय मूल के लोगो को ले जाया गया। ये एक तरह से बधुआ मजदूर थे। दिन भर कठोर श्रम करते थे और शाम को अपनी भाषा के लोकगीत, हनुमान चालीसा और राम चरित मानस की चौपाईयां गाते थे। इस तरह ये हिन्दी भाषी अपनी संस्कृति को जीते थे। इन मजदूरो मे तमिलनाडु के तमिल भाषी तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के भोजपुरी भाषी लोग विपुल संख्या मे थे। इन्ही भोजपुरी और अवधी भाषी मजदूरों द्वारा प्रवासी हिन्दी साहित्य की रचना उन- उन देशो मे होनी शुरू हुई जिन-जिन देशो मे ये मौजूद थे। बाद मे ये मजदूर वही बस गये और उपनिवेशों की समाप्ति के बाद उन्हे वहां के नागरिक अधिकार भी प्राप्त हुए। आज उन गिरमिटिया मजदूरो की दूसरी- तीसरी पीढी वहॉ विद्यमान है, इन्हीं गिरमिटिया मजदूरों ने अपनी भाषा और संस्कृति को उस नवीन परिवेश मे भी किंचित् परिवर्तन के साथ जिन्दा रखा है। उनके द्वारा अपनी मातृ भाषा में भारतीय संस्कृति के संरक्षण का स्तुत्य प्रयास है और अपनी अस्मिता की रक्षा का सफल उद्योग भी । शुरूआती प्रवासी लेखन मे अपनी जड़ों से कटने की पीड़ा, अपने मूल देश की स्मृतियॉ, वहॉ न पहुंच पाने की बेचैनी आदि बहुत व्यापकता से दिखाई देती है, लेकिन कालान्तर मे इसमे परिवर्तन आया है। अंग्रेजी साम्राज्य से मुक्ति के बाद यूरोप और अमेरिका मे सुनहरे भविष्य का सपना संजोकर सुशिक्षित भारतीयों की एक पीढ़ी जाकर रह रही है । इन अप्रवासी भारतीयों मे से भी अनेक लोग साहित्यिक लेखन कर रहे हैं । उनके साहित्य को भी हिन्दी साहित्य मे महत्व दिया जाने लगा है । डॉ० कमल किशोर गोयनका ने प्रवासी और अप्रवासी हिन्दी साहित्य मे अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है - हिन्दी में अब प्रवासी साहित्य एक स्वीकृत तथा लोकप्रिय अवधारणा है और भारतेतर हिन्दी साहित्य की पहचान अब दो रूपों मे होती है -प्रवासी भारतीयों का साहित्य और भारत वंशियो का साहित्य । भारतवंशियों

के हिन्दी साहित्य में मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड आदि देशों का साहित्य आता है, जिनका जन्म इन देशों मे हुआ है और ये लेखक भारतभूमि और उसकी संस्कृति, धर्म, परम्पराओं आदि से स्वयं को जोड़े हुए हैं और प्रवासी साहित्य में अमेरिका, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया, नीदरलैण्ड, नार्वे, डेनमार्क आदि देशों मे भारतीय प्रवासियों की पहली पीढ़ी का साहित्य आता हैं, जो बेहतर जीवन एवं शिक्षा के लिए इन देशों मे गए और अपने हिन्दी - प्रेम के कारण उसे अपनी अभिव्यक्ति की भाषा बनाया। इस प्रकार ये दो भिन्न धाराएँ होने पर भी प्रवासी भारतीयों तथा उनके वंशजों का हिन्दी - साहित्य, प्रवासी भारतीय संवेदना एवं चेतना का व्यापक परिदृश्य प्रस्तुत करता है, जिसे भारत और भारतीयता को विस्तार के रूप में देखा जाना चाहिए।'' [3]

इस प्रकार प्रवासी साहित्य मे निम्नलिखित विशेषताएं परिलक्षित होती है -

1. इसमें अपने मूल देश की सामूहिक स्मृतियॉ होती है।
2. अपने पैतृक स्थान को ही वें अपना मूल घर मानते है, और उसके प्रति अनुराग रखते है।
3. उन्हें अपने मूल घर वापस जाने की कामना होती है।
4. स्वंय को अपनी मातृ भूमि से जोड़कर वे अपने व्यक्तित्व को पहचान देते हैं।

वर्तमान प्रवासी हिन्दी लेखन के उद्भव और विकास पर प्रकाश डालते हुए डॉ० कमल किशोर गोयनका ने लिखा हैए - ''इसका आरम्भ प्रेमचन्द की 'यही मेरी मातृभूमि है।' (1908) तथा शूद्रा (1926) कहानियों से होता है। इन कहानियों में अमरीका से लौटे भारतीय प्रवासी तथा मॉरिशस ले जाए गए भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की कहानियॉ है। फिजी के सम्बन्ध में प्रवासी तोताराम और पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी की पुस्तकें (मर्यादा पत्रिका 1929) प्रकाशित हुई और चॉद जनवरी, 1926 में प्रकाशित 'प्रवासी अंक' में भारतीय प्रवासी समाज की साहित्य मे अवतारणा हुई।' [4]

डॉ० गोयनका ने 'हिन्दी के प्रवासी साहित्य का सर्वेक्षण' नामक आलेख में प्रवासी साहित्य को तीन कोटियों मे विभाजित किया है। प्रवासी भारतीय महत्वूपर्ण रचनाकारों में अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, मधुकर, मुनीश्वर चिन्तामणि, डॉ वीरसेन जागा सिंह, इन्द्रदेव भोला, हरिनायक सीता, आजमिल माताबदल, अलका धनपत ; ब्रिटेन के रमेश पटल, दिव्या माथुर, गौतम

सचदेव, तेजेन्द्र शर्मा आदि, अमेरिका के सुषमवेदी, सुदर्शन प्रियदर्शिनी, कुंवरचन्द प्रकाश सिंह, डॉ० वेद प्रकाश बटुक, डॉ० अंजना समधीर आदि हैं। आस्ट्रेलिया के रेखा राजवंशी, नार्वे के सुरेशचन्द्र शुक्ल शुक्ल 'शरद आलोक' चीन की अनीता शर्मा आदि ने विश्व के मानचित्र पर भारतीय भाषा साहित्य एवं संस्कृति की सार्थक उपस्थिति अपने लेखन के माध्यम से दर्ज की है। अभिमन्यु अनत का 'लाल पसीना' बहुत ही प्रसिद्ध रचना है।

डॉ० लक्ष्मीमल सिंघवी प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के कार्यकाल में इंग्लैण्ड में भारत के उच्चायुक्त थे। उन्होंने प्रवासी भारतीयों की भावना को दृष्टिगत रखते हुए प्रवासी दिवस की परिकल्पना की और 9 जनवरी को प्रवासी दिवस मनाने की शुरूआत की। उनके प्रयास से प्रवासी भारतीयों के साथ ही साथ प्रवासी हिन्दी साहित्य को भी विशेष महत्व प्राप्त हुआ। सूरीनाम के महातम सिंह की कविता जो 'बसन्त में अप्रैल, 2003 में प्रकाशित हुई थी, इसी भावना की अभिव्यक्ति करती हैं –

''भिन्न देशों में उन्होंने बो दिया अनुराग
रक्त का अभिषेक श्रम से कर बहाया स्वेद
धन्य है उनका परिश्रम, धन्य है उपकार
आज भारत राष्ट्र उनका मानता आभार''[5]

वर्ष 2016 ई० में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी ने तीन दिवसीय (10 से 12 जनवरी 2016) प्रवासी हिन्दी साहित्य का आयोजन किया था, जिसमें डॉ० ओम वर्मा, तेजेन्द्र शर्मा, स्नेह ठाकुर, अलका धनपत, आदि अनेक प्रवासी साहित्यकारो ने प्रतिभाग किया तथा प्रवासी हिन्दी साहित्य की चिन्ताओं और चुनौतियों से हमारा परिचय कराया। आज दुनिया के अनेक देशों से हिन्दी की अनेक पत्र/पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। इनमें बसन्त, दुर्गा, प्रवासी संसार, अभिव्यक्ति, अनुभूति, निकट आदि प्रमुख है। अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी समिति की त्रैयमासिक पत्रिका 'विश्वा' भी प्रवासी हिन्दी साहित्य के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। प्रवासी हिन्दी साहित्य आज हिन्दी साहित्य में अपना मजबूत स्थान बना चुका है।

सन्दर्भ

1. डायास्पेरा www.wikipedia.com
2. William saforn, disapora in modern society, myth of home land and return in diaspora, 1, no 1, pp.83-99
3. कमल किशोर, गोयनका, प्रवासी साहित्य: जोहान्सवर्ग से आगे, पृष्ठ सं॰- 8
4. कमल किशोर, गोयनका, प्रवासी साहित्य: जोहान्सवर्ग से आगे, पृष्ठ सं॰- 7
5. कमल किशोर, गोयनका, प्रवासी साहित्य: जोहान्सवर्ग से आगे, पृष्ठ सं॰- 36